सातवां अध्याय

।।दिव्य सारांश।।

❖ *विश्लेषण :- इस अध्याय 7 में श्लोक नं. 12-15 तथा 20-23 में तीनों गुणों यानि रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु, तमगुण शिव जी तथा अन्य देवी-देवताओं की भक्ति ईष्ट मानकर करना व्यर्थ कहा है। इनकी भक्ति करने वालों को राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए मनुष्यों में नीच, दूषित कर्म करने वाले मूर्ख कहा है।*

❖ *अध्याय 7 श्लोक 16-18 में गीता ज्ञान दाता ने अपने भक्तों तथा अपनी साधना से होने वाली गति की जानकारी दी है। कहा है कि मेरी भक्ति चार प्रकार के भक्त करते हैं :- 1. आर्त 2. अर्थार्थी 3. जिज्ञासु 4. ज्ञानी। इनमें से ज्ञानी उत्तम है, मुझे प्रिय है क्योंकि वह अन्य देवताओं की भक्ति नहीं करता। केवल मुझ ब्रह्म की भक्ति करता है। परंतु तत्वज्ञान के अभाव से वे उदार ज्ञानी आत्मा भी मेरी अनुत्तम यानि घटिया गति (मोक्ष) में ही स्थित है क्योंकि गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 4 श्लोक 5, अध्याय 2 श्लोक 12, अध्याय 10 श्लोक 2 में कहा है कि मैं नाशवान हूँ क्योंकि मेरा भी जन्म-मरण होता है। जिस कारण से साधक का भी जन्म-मरण सदा रहेगा। इसलिए गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में अपने से अन्य परमेश्वर की शरण में जाने को कहा है तथा कहा है कि उसी परमेश्वर की कृपा से तू परम शांति को तथा सनातन परम धाम (शाश्वतम् स्थानम्) को प्राप्त होगा। विचार करें कि जब तक जन्म-मरण है, तब तक जीव को शांति नहीं हो सकती। कर्मों का कष्ट सदा बना रहेगा। जब जन्म-मरण सदा के लिए समाप्त हो जाएगा, तब ही परम शांति प्राप्त होती है।*

❖ *गीता अध्याय 7 श्लोक 19 में कहा है कि उसी परमेश्वर यानि वासुदेव की भक्ति व महिमा बताने वाला संत मिलना अति दुर्लभ है। गीता के इसी अध्याय 7 के श्लोक 29 में गीता ज्ञान दाता ने उसी वासुदेव के विषय में बताया है। कहा है कि ''जो मेरे ज्ञान का आश्रय लेकर तत्वदर्शी संत से तत्वज्ञान समझकर केवल जरा यानि वृद्धावस्था तथा मरण यानि मृत्यु से छुटकारा पाने के लिए परमात्मा की साधना कर रहे हैं, वे ''तत् ब्रह्म'' सम्पूर्ण अध्यात्म को तथा सम्पूर्ण कर्मों को जानते हैं। गीता अध्याय 8 श्लोक 1 में अर्जुन ने अपनी शंका का समाधान करवाने के लिए गीता ज्ञान दाता से प्रश्न किया कि ''तत् ब्रह्म'' क्या है? इसका उत्तर गीता ज्ञान दाता ने अध्याय 8 के ही श्लोक 3, 8, 9, 10, 20, 21, 22 में बताया है कि वह ''परम अक्षर ब्रह्म'' है, वह वास्तव में अविनाशी परमेश्वर है जिसने सर्व प्राणियों व जगत की उत्पत्ति की है जो सर्व प्राणियों के नष्ट होने पर भी नष्ट नहीं होता। उसकी भक्ति करने वाला उसी को प्राप्त होता है।*

।। इस ज्ञान को जानने के बाद कुछ भी जानना शेष नहीं।।

अध्याय 7 के श्लोक 1 से 11 में कहा है कि अर्जुन जो कोई मेरे (ब्रह्म) में पूर्णरूप से आसक्त होकर लगा हुआ है और जिस ज्ञान से मेरा परमभक्त पूर्ण ज्ञान युक्त हो जाएगा। इस ज्ञान से उसे पता लग जाएगा कि कौन कितने पानी में है। श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी, ब्रह्म तथा परम अक्षर ब्रह्म तक की स्थिति से परिचित हो जाएगा तथा पूर्ण सन्त की खोज करके तत् ब्रह्म (पूर्ण परमात्मा) की भक्ति की चेष्टा करेगा। इस ज्ञान को समझने के उपरान्त फिर जानने के

लिए कुछ भी शेष नहीं रहेगा। वह ज्ञान अब कहूँगा। हजारों साधको में कोई एक प्रभु प्राप्त करने का यत्न करता है जो मेरे से पूर्ण परीचित हैं कि मैं वास्तव में काल हूँ। फिर वह साधक जन्म-मत्यु से छूटने की भरसक कोशिश करता है। {गीताप्रैस गोरखपुर से प्रकाशित श्री देवी भागवत महापुराण जिसके सम्पादक श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार, चिमन लाल गोस्वामी, के पष्ठ 123 पर भी यह प्रमाण है। लिखा है कि भगवान शिव ने दुर्गा (प्रकति देवी) की महिमा करते हुए कहा, शिवे! सम्पूर्ण संसार की संष्टि करने में तुम बड़ी चतुर हो, मात! पथ्वी, जल, पवन, आकाश, अग्नि, ज्ञानेन्द्रिय, कर्मेन्द्रिय, बुद्धि, मन और अहंकार ये सब तुम्हीं हो। इस संसार की संष्टि, स्थिति और संहार करने में तुम्हारे गुण सदा समर्थ हैं। उन्हीं तीनों गुणों से उत्पन्न हम (ब्रह्मा, विष्णु, शंकर) नियमानुसार कार्य करने में तत्पर रहते हैं।} गीता अध्याय 7 श्लोक 4 से 6 में स्पष्ट किया है कि मेरी आठ प्रकार की माया जो आठ भाग में विभाजित है पाँच तत्व तथा तीन (मन, बुद्धि, अहंकार) ये आठ भाग हैं। यह तो जड़ प्रकति है। सर्व प्राणियों को उत्पन्न करने में सहयोगी हैं, {जैसे मन के कारण प्राणी नाना इच्छाऐं करता है। इच्छा ही जन्म का कारण है। पाँच तत्वों से स्थूल शरीर बनता है तथा मन, बुद्धि, अहंकार के सहयोग से सूक्ष्म शरीर बना है तथा इससे दूसरी चेतन प्रकति (दुर्गा)है। यही दुर्गा (प्रकति) ही अन्य तीन रूप महालक्ष्मी - महासावित्री - महागौरी आदि बनाकर काल (ब्रह्म) के साथ पति-पत्नी व्यवहार से तीनों पुत्रों रजगुण युक्त श्री ब्रह्मा जी, सतगुण युक्त श्री विष्णु जी, तमगुण युक्त श्री शिव जी को उत्पन्न करती है। फिर भूल - भूलईयाँ करके तीन अन्य स्त्री रूप सावित्री, लक्ष्मी तथा गौरी बनाकर तीनों देवताओं (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी) से विवाह करके काल के जीव उत्पन्न करती है। जो चेतन प्रकति (शेराँवाली) है। इसके सहयोग से काल सर्व प्राणियों की उत्पत्ति करता है, (प्रमाण गीता अध्याय 14 श्लोक 3 से 5 में।) गीता ज्ञान दाता काल कह रहा है कि मैं सारे संसार के जीवों के प्रलय तथा उत्पत्ति का कारण हूँ। (क्योंकि काल को एक लाख मानव शरीर धारी प्राणी प्रतिदिन खाने पड़ते हैं)। सातवें श्लोक में कहा है कि सर्व संसार मेरे (ब्रह्म) में जकड़ा है। कबीर साहेब जी महाराज कहते हैं कि :–

सुर नर मुनिजन तेतीस करोड़ी। बंधे सब ज्योति निरंजन डोरी।।

भावार्थ :- तेतीस करोड़ देवता, अठासी हजार मुनिजन तथा सर्व जीव काल की डोर यानि कर्म रूपी रस्सी के फांस में बँधे हैं।

विशेष :- गीता अध्याय 14 के श्लोक 3-5 में स्पष्ट है कि गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म ने कहा है कि :-

❖ *अध्याय 14 श्लोक 3 :- (मम ब्रह्म) मुझ ब्रह्म की (महत्) प्रकति यानि दुर्गा की योनि है। मैं (तस्मिन) उस (योनिः) योनि में गर्भ स्थापित करता हूँ। उससे सर्व प्राणियों की उत्पत्ति होती है।(14/3)*

❖ *अध्याय 14 श्लोक 4 :- हे अर्जुन! सर्व योनियों में जितने भी शरीरधारी प्राणी उत्पन्न होते हैं (तासाम) उन सबकी गर्भ धारण करने वाली माता (महत्) प्रकति यानि दुर्गा है (अहम् ब्रह्म) मैं ब्रह्म उनमें (बीज प्रदः) बीज डालने वाला (पिता) पिता हूँ।*

❖ *अध्याय 14 श्लोक 5 :- हे अर्जुन! रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव ये तीनों गुण यानि देवता (प्रकति सम्भवाः) प्रकति यानि दुर्गा अष्टांगी से उत्पन्न हुए हैं जो जीवात्माओं को कर्मों के फल अनुसार भिन्न-भिन्न प्राणियों के शरीर में उत्पन्न करके बाँधते हैं।(14/5)*

इन श्लोकों से स्पष्ट है कि देवी दुर्गा व काल ब्रह्म भोग-विलास करके ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव

जी को उत्पन्न करते हैं। श्री देवी महापुराण के तीसरे स्कंद में अध्याय 5 के श्लोक 12 में स्पष्ट है कि दुर्गा अपने पति काल ब्रह्म के साथ रमण (Sex) करती है। इसका प्रमाण आप जी आगे इसी अध्याय 7 के सारांश में पढ़ेंगे।

गीता अध्याय 7 श्लोक 7 से 11 तक ब्रह्म कहता है कि मैं जल का गुण रस हूँ, प्रकाश हूँ तथा वेदों में (प्रणव) औंकार (ऊँ) हूँ और सर्व तत्व का गुण भी मैं ही हूँ। मनुष्यों में श्रेष्ठ हूँ तथा मुझे ही सर्व प्राणियों (स्थूल शरीर व सूक्ष्म शरीर में जीव) का कारण जान। तेजस्वियों का तेज भी मेरे से ही है। बुद्धिमानों की बुद्धि (जब चाहे बुद्धि प्रदान कर देता हूँ जब चाहे बुद्धि भ्रष्ट कर देता हूँ), तपस्वियों का तप भी मैं (काल) ही हूँ। (चूंकि तपस्वियों को राज देता है वहाँ भी आनन्द मन (काल) ही लेता है।) मैं (काल) ही शक्तिशालियों का बल हूँ तथा सब प्राणियों में व्यवस्थित काम (Sex) हूँ। {(जैसे पहले अर्जुन को बल दे कर योद्धा बना दिया। युद्ध जीता, अर्जुन ने बड़े-2 योद्धा मार डाले फिर बल वापिस ले लिया। जब भगवान श्री कष्ण जी का वध एक शिकारी ने कर दिया तो अर्जुन गोपियों (कष्ण जी की 16000 (सोलह हजार) अवैध स्त्रियों) तथा सर्व यादवों की मत्यु के पश्चात् विधवा हुई। यादवों की स्त्रियों को लाने द्वारिका से इन्द्रप्रस्थ अपनी राजधानी में ले जा रहा था। रास्ते में भीलों ने अर्जुन को पीटा तथा स्त्रियों को लूट ले गए तथा कुछ स्त्रियों को साथ भी ले गए। उस समय काल ब्रह्म ने अर्जुन को बल रहित कर दिया जिसके कारण अर्जुन से गांडिव धनुष भी नहीं चला।)}

दूसरा उदाहरण :- जिस समय लंका पति रावण ने सीता जी का अपहरण कर लिया था। उस समय सीता जी की खोज में श्री राम वन-2 भटक रहे थे। उन्हें पता नहीं था कि उनकी पत्नी सीता जी का कौन उठा ले गया है? कहां है? क्योंकि काल ब्रह्म ने उसकी बुद्धि को बंद कर रखा था। उसी समय पार्वती जी (पत्नी शिव जी) सीता जी का रूप धारण करके श्री रामचन्द्र जी की परिक्षा लेने आई तो श्री राम ने पहचान लिया की आप पार्वती हैं। उस समय काल ब्रह्म अर्थात् गीता ज्ञान दाता ने श्री रामचन्द्र(श्री विष्णु) की बुद्धि खोल दी। इसीलिए यहां श्लोक 10,11 में कहा है कि बलवानों का बल तथा बुद्धिमानों की बुद्धि मेरे हाथ में है।

''तीनों गुण क्या हैं? प्रमाण सहित''

''तीनों गुण रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी हैं। ब्रह्म (काल) तथा प्रकति (दुर्गा) से उत्पन्न हुए हैं तथा तीनों नाशवान हैं''

प्रमाण :- गीताप्रैस गोरखपुर से प्रकाशित श्री शिव महापुराण जिसके सम्पादक हैं श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार पष्ठ सं. 110 अध्याय 9 रूद्र संहिता ''इस प्रकार ब्रह्मा-विष्णु तथा शिव तीनों देवताओं में गुण हैं, परन्तु शिव (ब्रह्म-काल) गुणातीत कहा गया है।

दूसरा प्रमाण :- गीताप्रैस गोरखपुर से प्रकाशित श्रीमद् देवीभागवत पुराण जिसके सम्पादक हैं श्री हनुमान प्रसाद पौद्दार चिमन लाल गोस्वामी, तीसरा स्कंद, अध्याय 5 पष्ठ 123 :- भगवान विष्णु ने दुर्गा की स्तुति की : कहा कि मैं (विष्णु), ब्रह्मा तथा शंकर तुम्हारी कप्या से विद्यमान हैं। हमारा तो आविर्भाव (जन्म) तथा तिरोभाव (मत्यु) होता है। हम नित्य (अविनाशी) नहीं हैं। तुम ही नित्य हो, जगत् जननी हो, प्रकति और सनातनी देवी हो। भगवान शंकर ने कहा : यदि भगवान ब्रह्मा तथा भगवान विष्णु तुम्हीं से उत्पन्न हुए हैं तो उनके बाद उत्पन्न होने वाला मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर क्या तुम्हारी संतान नहीं हुआ अर्थात् मुझे भी उत्पन्न करने वाली तुम ही हों। इस

संसार की सष्टि-स्थिति-संहार में तुम्हारे गुण सदा सर्वदा हैं। इन्हीं तीनों गुणों से उत्पन्न हम, ब्रह्मा-विष्णु तथा शंकर नियमानुसार कार्य में तत्पर रहते हैं।

उपरोक्त यह विवरण केवल हिन्दी में अनुवादित श्री देवीमहापुराण से है, जिसमें कुछ तथ्यों को छुपाया गया है। इसलिए यही प्रमाण देखें श्री मद्देवीभागवत महापुराण सभाषटिकम् समहात्यम्, खेमराज श्री कष्ण दास प्रकाश मुम्बई, इसमें संस्कत सहित हिन्दी अनुवाद किया है। तीसरा स्कंद अध्याय 4 पष्ठ 10, श्लोक 42 :-

ब्रह्मा *- अहम् महेश्वरः फिल ते प्रभावात्सर्वे वयं जनि युता न यदा तू नित्याः, के अन्ये सुराः शतमख प्रमुखाः च नित्या नित्या त्वमेव जननी प्रकतिः पुराणा (42)।*

हिन्दी अनुवाद :- हे मात! ब्रह्मा, मैं तथा शिव तुम्हारे ही प्रभाव से जन्मवान हैं, नित्य नही हैं अर्थात् हम अविनाशी नहीं हैं, फिर अन्य इन्द्रादि दूसरे देवता किस प्रकार नित्य हो सकते हैं। तुम ही अविनाशी हो, प्रकति तथा सनातनी देवी हो। (42)

पष्ठ 11-12, अध्याय 5, श्लोक 8 :- *यदि दयार्द्रमना न सदां बिके कथमहं विहितः च तमोगुणः कमलजश्च रजोगुणसंभवः सुविहितः किमु सत्वगुणों हरिः। (8)*

अनुवाद :- भगवान शंकर बोले :-हे मात! यदि हमारे ऊपर आप दयायुक्त हो तो मुझे तमोगुण क्यों बनाया, कमल से उत्पन्न ब्रह्मा को रजोगुण किस लिए बनाया तथा विष्णु को सतगुण क्यों बनाया? अर्थात् जीवों के जन्म-मत्यु रूपी कर्म में क्यों लगाया?

''देवी दुर्गा का पति है, का प्रमाण''

श्लोक 12 :- *रमयसे स्वपतिं पुरुषं सदा तव गतिं न हि विह विद्म शिवे (12)*

हिन्दी - अपने पति पुरुष अर्थात् काल भगवान के साथ सदा भोग-विलास (Sex) करती रहती हो। आपकी गति कोई नहीं जानता।

तीसरा स्कंद पष्ठ 14, अध्याय 5 श्लोक 43 :- *एकमेवा द्वितीयं यत् ब्रह्म वेदा वदंति वै। सा किं त्वम् वा प्यसौ वा किं संदेहं विनिवर्तय। (43)*

अनुवाद :- जो कि वेदों में अद्वितीय केवल एक पूर्ण ब्रह्म कहा है क्या वह आप ही हैं या कोई और है? मेरी इस शंका का निवार्ण करें। ब्रह्मा जी की प्रार्थना पर देवी ने कहा -

देव्युवाच सदैकत्वं न भेदो स्ति सर्वदैव ममास्य च।। यो सौ सा हमहं यो सौ भेदो स्ति मतिविभ्रमात्।।2।। आवयोरंतरं सूक्ष्मं यो वेद मतिमान्हि सः।। विमुक्तः स तू संसारान्मुच्यते नात्र संश्यः।।3।।

अनुवाद - यह है सो मैं हूं, जो मैं हूं सो यह है, मति के विभ्रम होनेसे भेद भासता है।।2।। हम दोनों का जो सूक्ष्म अन्तर है इसको जो जानता है वही मतिमान अर्थात् तत्वदर्शी है, वह संसार से पथक् होकर मुक्त होता है, इसमें संदेह नहीं।।3।।

सुमरणाद्दर्शनं तुभ्यं दास्ये हं विषमे स्थिते।। स्वर्तव्या हं सदा देवाः परमात्मा सनातनः।।80।। उभयोः सुमरणादेव कार्यसिद्धिर संश्यम्।।ब्रह्मोवाच।। इत्युक्त्वा विससर्जास्मान्द त्त्वा शक्तीः सुसंस्कतान्।।81।। विष्णवे थ महालक्ष्मी महाकालीं शिवाय च।। महासरस्वतीं मह्यं स्थानात्तस्माद्विसर्जिताः।।82।।

अनुवाद - संकट उपस्थित होने पर सुमरण से ही मैं तुमको दर्शन दूंगी, देवताओं! परमात्मा सनातन देवकी शक्तिरूपसे मेरा सदा सुमरण करना।।80।। दोनों के सुमरण से अवश्य कार्यसिद्धि होगी, ब्रह्माजी बोले इस प्रकार संस्कार कर शक्ति देकर हमको विदा किया।।81।। विष्णु के निमित्त

महालक्ष्मी, शिव के निमित्त महाकाली, और हमको महासरस्वती देकर विदा किया।।82।।

मम चैव शरीरं वै सूत्रमित्याभिधीयते।। स्थूलं शरीरं वक्ष्यामि ब्रह्मणः परमात्मनः।।83।।

अनुवाद :- देवी ने कहा - मेरा शरीर सूत्ररूप कहा जाता है, परमात्मा ब्रह्म का स्थूल शरीर कहाता है।।83।।

❖ *मार्कण्डेय पुराण पष्ठ 123 पर लिखा है कि ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव तीन प्रधान शक्तियाँ हैं। ये ही तीन देवता हैं। ये ही तीन गुण हैं।*

❖ *निष्कर्ष :- उपरोक्त प्रमाणों से स्पष्ट हुआ कि गीता के अध्याय 7 श्लोक 12-15 में त्रिगुण माया इन्हीं तीनों गुणों यानि तीनों देवताओं का वर्णन है जो केवल इन्हीं की भक्ति तक सीमित है। वे राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए मनुष्यों में नीच दूषित कर्म करने वाले मूर्ख हैं। वे मेरी यानि गीता ज्ञान दाता काल की भक्ति नहीं करवाते।*

गीता अध्याय 7 श्लोक 12-15 का सारांश :-

।। ब्रह्मा विष्णु शिव (त्रिगुण माया) जीव को मुक्त नहीं होने देते।।

गीता अध्याय 7 श्लोक 12-15 में कहा है कि रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव रूपी त्रिगुण माया की भक्ति राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए, मनुष्यों में नीच, दूषित कर्म करने वाले मूर्ख व्यक्ति करते हैं।

गीता अध्याय 7 श्लोक 12 : तीनों गुणों से जो कुछ हो रहा है वह मुझ से ही हुआ जान। जैसे रजगुण (ब्रह्मा) से उत्पत्ति, सतगुण (विष्णु) से संस्कार अनुसार पालन-पोषण स्थिति तथा तमगुण (शिव) से प्रलय (संहार) का कारण काल भगवान ही है। फिर कहा है कि मैं इन में नहीं हूँ। क्योंकि काल बहुत दूर (इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में निज लोक में रहता है) है परंतु मन रूप में मौज काल ही मनाता है तथा रिमोट से सर्व प्राणियों तथा ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी व श्री शिव जी को यन्त्र की तरह चलाता है।

मैं केवल इक्कीस ब्रह्मण्ड़ों में ही मालिक हूँ। {(गीता अ. 7 श्लोक 12 से 15 तक) तीनों गुणों से (रजगुण-ब्रह्मा से जीवों की उत्पत्ति, सतगुण-विष्णु जी से स्थिति तथा तमगुण-शिव जी से संहार)} जो कुछ भी हो रहा है उसका मुख्य कारण मैं (ब्रह्म/काल) ही हूँ। (क्योंकि काल को शाप लगा है कि एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों के शरीर को मार कर मैल को खाने का) जो साधक मेरी (ब्रह्म की) साधना न करके त्रिगुणमयी माया (रजगुण-ब्रह्मा जी, सतगुण-विष्णु जी, तमगुण-शिव जी) की साधना करके क्षणिक लाभ प्राप्त करते हैं, जिससे ज्यादा कष्ट उठाते रहते हैं, साथ में संकेत किया है कि इनसे ज्यादा लाभ मैं (ब्रह्म-काल) दे सकता हूँ, परन्तु ये मूर्ख साधक तत्वज्ञान के अभाव से इस त्रिगुण माया अर्थात् इन्हीं तीनों गुणों (रजगुण-ब्रह्मा जी, सतगुण-विष्णु जी, तमगुण-शिव जी) तक की साधना करते रहते हैं। इनकी बुद्धि इन्हीं तीनों प्रभुओं तक सीमित है। इसलिए ये राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए, मनुष्यों में नीच, दुष्कर्म करने वाले, मूर्ख मुझे (ब्रह्म को)नहीं भजते। यही प्रमाण गीता अध्याय 16 श्लोक 4 से 20 तक, अध्याय 17 श्लोक 2 से 14 तथा 19 व 20 में भी है। यही प्रमाण गीता अध्याय 7 श्लोक 20 से 23 में है।

❖ *विचार करें :- रावण ने भगवान शिव जी को मत्युंजय, अजर-अमर, सर्वेश्वर मान कर भक्ति की, दस बार शीश काट कर समर्पित कर दिया, जिसके बदले में युद्ध के दौरान दस शीश रावण को प्राप्त हुए, परन्तु मुक्ति नहीं हुई, राक्षस कहलाया। यह दोष रावण के गुरुदेव का है जिस*

नादान (नीम-हकीम) ने वेदों को ठीक से न समझ कर अपनी सोच से तमोगुण युक्त भगवान शिव को ही पूर्ण परमात्मा बताया तथा भोली आत्मा रावण ने झूठे गुरुदेव पर विश्वास करके जीवन व अपने कुल का नाश किया।

❖ *एक वकासुर का साधक था जो बाद में भस्मागिरी, फिर भस्मासुर नाम से कुख्यात हुआ जिसने शिव जी (तमोगुण) को ही इष्ट मान कर शीर्षासन (ऊपर को पैर नीचे को शीश) करके 12 वर्ष तक साधना की, वचन बद्ध करके भस्मकण्डा माँगकर ले लिया। भगवान शिव जी को ही मारने लगा। उद्देश्य यह था कि भस्मकण्डा प्राप्त करके भगवान शिव जी को मार कर पार्वती जी को पत्नी बनाऊँगा। भगवान श्री शिव जी डर के मारे भाग गए, फिर श्री विष्णु जी ने मोहिनी रूप धारण करके उस भस्मासुर को गंडहथ नाच नचा कर उसी भस्मकण्डे से भस्म किया। वह शिव जी (तमोगुण) का साधक राक्षस कहलाया। हिरण्यकशिपु ने भगवान ब्रह्मा जी (रजोगुण) की साधना की तथा राक्षस कहलाया।*

❖ *एक समय आज (सन् 2006) से लगभग 325 वर्ष पूर्व हरिद्वार में हर की पैड़ियों पर (शास्त्र विधि रहित साधना करने वालों के) कुम्भ पर्व की प्रभी का संयोग हुआ। वहाँ पर सर्व (त्रिगुण उपासक) महात्मा जन स्नानार्थ पहुँचे। गिरी, पुरी, नाथ, नागा आदि भगवान श्री शिव जी (तमोगुण) के उपासक तथा वैष्णों भगवान श्री विष्णु जी (सतोगुण) के उपासक हैं। प्रथम स्नान करने के कारण नागा तथा वैष्णों साधुओं में घोर युद्ध हो गया। लगभग 25000 (पच्चीस हजार) त्रिगुण उपासक मत्यु को प्राप्त हुए। जो व्यक्ति जरा-सी बात पर कत्ले आम कर देता है वह साधु है या राक्षस स्वयं विचार करें। आम व्यक्ति भी कहीं स्नान कर रहे हों और कोई व्यक्ति आ कर कहे कि मुझे भी कुछ स्थान स्नान के लिए देने की कप्या करें। शिष्टाचार के नाते कहते हैं कि आओ आप भी स्नान कर लो। इधर-उधर हो कर आने वाले को स्थान दे देते हैं। इसलिए पवित्र गीता जी अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 में कहा है कि जिनका मेरी त्रिगुणमयी माया(रजगुण-ब्रह्मा जी, सतगुण-विष्णु जी, तमगुण-शिव जी) की पूजा के द्वारा ज्ञान हरा जा चुका है, वे केवल मान बड़ाई के भूखे राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए, मनुष्यों में नीच अर्थात् आम व्यक्ति से भी पतित स्वभाव वाले, दुष्कर्म करने वाले मूर्ख मेरी भक्ति भी नहीं करते।*

गीता अध्याय 7 श्लोक 16-18 का सारांश :-

''गीता ज्ञान देने वाले ने अपनी भक्ति से होने वाली गति को अनुत्तम यानि घटिया क्यों कहा?''

❖ *गीता अध्याय 7 श्लोक 16 से 18 तक पवित्र गीता जी के बोलने वाले (ब्रह्म) काल प्रभु ने कहा कि मेरी भक्ति (ब्रह्म साधना) भी चार प्रकार के साधक करते हैं। एक तो अर्थार्थी (धन लाभ चाहने वाले) जो वेद मंत्रों से ही जंत्र-मंत्र, हवन आदि करते रहते हैं। दूसरे आर्त्त (संकट निवार्ण के लिए वेदों के मंत्रों का जंत्र-मंत्र हवन आदि करते रहते हैं) तीसरे जिज्ञासु जो परमात्मा के ज्ञान को जानने की इच्छा रखने वाले केवल ज्ञान संग्रह करके वक्ता बन जाते हैं तथा दूसरों में ज्ञानवान बनकर अभिमानवश भक्ति हीन हो जाते हैं, चौथे ज्ञानी। वे साधक जिनको यह ज्ञान हो गया कि मानव शरीर बार-बार नहीं मिलता, इससे प्रभु साधना नहीं की तो जीवन व्यर्थ हो जाएगा। उन्होंने वेदों को पढ़ा, जिनसे ज्ञान हुआ कि (ब्रह्मा-विष्णु-शिवजी) तीनों गुणों व ब्रह्म (क्षर पुरुष) तथा परब्रह्म (अक्षर पुरुष) से ऊपर पूर्ण ब्रह्म की ही भक्ति करनी चाहिए, अन्य प्रभुओं की नहीं। उन*

ज्ञानी उदार आत्माओं को मैं (काल ब्रह्म) अच्छा लगता हूँ तथा मुझे वे इसलिए अच्छे लगते हैं कि वे तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तमगुण शिवजी) से ऊपर उठ कर मेरी (ब्रह्म) साधना तो करने लगे जो अन्य देवताओं से अच्छी है परन्तु वेदों में 'ओ३म्' नाम जो केवल ब्रह्म की साधना का मंत्र है। उन ज्ञानी आत्माओं ने उसी को आप ही विचार - विमर्श करके पूर्ण ब्रह्म का मंत्र जान कर वर्षों तक साधना करते रहे। प्रभु प्राप्ति हुई नहीं। अन्य सिद्धियाँ प्राप्त हो गई। क्योंकि पवित्र गीता अध्याय 4 श्लोक 34 तथा पवित्र यजुर्वेद अध्याय 40 मंत्र 10 में वर्णित तत्वदर्शी संत नहीं मिला, जो पूर्ण ब्रह्म की साधना तीन मंत्र से बताता है। इसलिए ज्ञानी भी ब्रह्म (काल) साधना करके जन्म-मत्यु के चक्र में ही रह गए क्योंकि गीता अध्याय 11 श्लोक 32 में गीता ज्ञान देने वाले ने कहा कि मैं काल हूँ। श्लोक 47-48 में कहा कि यह मेरा वास्तविक रूप है जिसको तेरे अतिरिक्त पहले किसी ने नहीं देखा है। मैंने तेरे पर अनुग्रह करके दर्शन दिए हैं। मेरे इस स्वरूप का दर्शन यानि काल ब्रह्म की प्राप्ति न तो वेदों का अध्ययन करने से, न यज्ञ यानि धार्मिक अनुष्ठान करने से, न दान से, न अन्य आध्यात्मिक क्रियाओं से, न उग्र तपों से हो सकती है यानि मैं देखा नहीं जा सकता हूँ। तेरे अतिरिक्त किसी को किसी भी साधना से मेरे दर्शन नहीं हो सकते। भावार्थ है कि वेदों में वर्णित साधना से परमात्मा प्राप्ति नहीं होती।

यही कारण रहा कि ऋषियों ने वेदों अनुसार सर्व साधना की, परंतु काल ब्रह्म का दर्शन नहीं हुआ क्योंकि गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 में स्पष्ट किया है कि मेरा यह अविनाशी अनुत्तम विधान है कि मैं कभी भी किसी के सामने अपने वास्तविक काल रूप में प्रत्यक्ष नहीं होता। प्रमाण आगे पढ़ें :-

उदाहरण :- एक ज्ञानी उदारात्मा महर्षि चुणक जी ने वेदों को पढ़ा तथा एक पूर्ण प्रभु की भक्ति का मंत्र ओ३म् जान कर इसी नाम के जाप से वर्षों तक साधना की। एक मान्धाता चक्रवर्ती राजा था। (चक्रवर्ती राजा उसे कहते हैं जिसका पूरी पथ्वी पर शासन हो।) उसने अपने अन्तर्गत राजाओं को युद्ध के लिए ललकारा, एक घोड़े के गले में पत्र बांध कर सारे राज्य में घुमाया। शर्त थी कि जिसे राजा मान्धाता की गुलामी (आधीनता) स्वीकार नहीं है। वह इस घोड़े को पकड़ कर बांध ले तथा युद्ध के लिए तैयार रहे। किसी ने घोड़ा नहीं पकड़ा। महर्षि चुणक जी को इस बात का पता चला कि राजा बहुत अभिमानी हो गया है। कहा कि मैं इस राजा के युद्ध को स्वीकार करता हूँ युद्ध शुरू हुआ। मान्धाता राजा के पास 72 क्षौणी सेना थी। उसके चार भाग करके एक भाग (18 क्षौणी) सेना से महर्षि चुणक पर आक्रमण कर दिया। दूसरी ओर महर्षि चुणक जी ने अपनी साधना की कमाई से चार पूतलियाँ (आध्यात्मिक बम्ब) बनाई तथा राजा की चारों भाग सेना का विनाश कर दिया।

विशेष :- श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी तथा ब्रह्म व परब्रह्म की भक्ति से पाप तथा पुण्य दोनों का फल भोगना पड़ता है, पुण्य स्वर्ग में तथा पाप नरक में व चौरासी लाख प्राणियों के शरीर में भिन्न-2 यातनाऐं भोगनी पड़ती हैं। जैसे ज्ञानी आत्मा श्री चुणक जी ने जो ओ३म् नाम के जाप की कमाई की उससे कुछ तो सिद्धि शक्ति (चार पुतलियाँ बनाकर) में समाप्त कर दिया जिससे महर्षि कहलाया। कुछ साधना फल को महास्वर्ग में भोग कर फिर नरक में जाएगा तथा फिर चौरासी लाख प्राणियों के शरीर धारण करके कष्ट पर कष्ट सहन करेगा। जो 72 क्षौणी प्राणियों (सैनिकों) का संहार वचन से तैयार की गई पुतलियों से किया था, उसका भोग भी भोगना होगा। चाहे कोई हथियार से हत्या करे, चाहे वचन रूपी तलवार से उन दोनों को समान दण्ड प्रभु

देता है। जब उस महर्षि चुणक जी का जीव कुत्ते के शरीर में होगा उसके सिर में जख्म होगा, उसमें कीड़े बनकर उन सैनिकों के जीव अपना प्रतिशोध लेंगे। कभी टांग टूटेगी, कभी पिछले पैरों से अर्धंग हो कर केवल अगले पैरों से घिसड़ कर चलेगा तथा गर्मी-सर्दी का कष्ट असहनीय पीड़ा नाना प्रकार से भोगनी ही पड़ेगी।

इसलिए पवित्र गीता जी बोलने वाला ब्रह्म (काल) गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में स्वयं कह रहा है कि ये सर्व ज्ञानी आत्माऐं हैं तो उदार (नेक)। परन्तु पूर्ण परमात्मा की तीन मंत्र की वास्तविक साधना बताने वाला तत्वदर्शी सन्त न मिलने के कारण ये सब मेरी ही (अनुत्तमाम्) अश्रेष्ठ मुक्ति (गती) की आस में ही आश्रित रहे अर्थात् मेरी साधना भी अश्रेष्ठ है। इसलिए पवित्र गीता जी अध्याय 18 श्लोक 62 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि हे अर्जुन! तू सर्व भाव से उस पूर्ण परमात्मा की शरण में जा। उस परमेश्वर की ही कृप्या से ही तू परम शान्ति तथा सनातन परम धाम (सत्यलोक) को प्राप्त होगा। पवित्र गीता जी को श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रेतवत प्रवेश करके ब्रह्म (काल) ने बोला, फिर कई वर्षों उपरांत पवित्र गीता जी तथा पवित्र चारों वेदों को महर्षि व्यास जी के शरीर में प्रेतवत प्रवेश करके स्वयं ब्रह्म (क्षर पुरुष) द्वारा लिपिबद्ध किए हैं। इनमें परमात्मा कैसा है, कैसे उसकी भक्ति करनी है तथा क्या उपलब्धि होगी, ज्ञान तो पूर्ण है परन्तु सांकेतिक है तथा पूजा की विधि केवल ब्रह्म (क्षर पुरुष) अर्थात् ज्योति निरंजन-काल तक की ही है।

पूर्ण ब्रह्म की भक्ति के लिए पवित्र गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में पवित्र गीता बोलने वाले (काल ब्रह्म) प्रभु ने स्वयं कहा है कि पूर्ण परमात्मा की भक्ति व प्राप्ति के लिए किसी तत्वज्ञानी सन्त की खोज कर फिर जैसे वह विधि बताएं वैसे कर। पवित्र गीता जी को बोलने वाले प्रभु ने स्पष्ट किया है कि पूर्ण परमात्मा का पूर्ण ज्ञान व भक्ति विधि मैं नहीं जानता। अपनी साधना के बारे में गीता अध्याय 8 के श्लोक 13 में कहा है कि मेरी भक्ति का तो केवल एक 'ओ३म्' (ओं) अक्षर है जिसका उच्चारण करके अन्तिम श्वांस (त्यजन् देहम्) तक जाप करने से मेरी वाली परमगति को प्राप्त होगा। फिर गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में कहा है कि वे उदारात्माऐं मेरे वाली (अनुत्तमाम्) अश्रेष्ठ परमगति में ही आश्रित हैं। गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तक में कहा है कि यह उल्टा लटका हुआ संसार रूपी वृक्ष है, जिसकी ऊपर को मूल (जड़ें) तो पूर्ण ब्रह्म यानि परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् आदि पुरुष परमेश्वर है तथा नीचे को तीनों गुण (रजगुण-ब्रह्मा जी, सतगुण-विष्णु जी, तमगुण-शिव जी) रूपी शाखाऐं हैं। इस सृष्टि रचना के पूर्ण ज्ञान को (श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रेतवत प्रवेश ब्रह्म कह रहा है कि) मैं नहीं जानता। इसलिए यहाँ विचार काल में अर्थात् इस गीता संवाद में मुझे पूर्ण जानकारी नहीं है। जो संत उपरोक्त संसार रूपी वृक्ष अर्थात् सृष्टि की रचना के विषय का पूर्ण ज्ञानी होगा, वह मूल, तना, डार तथा टहनियों का भिन्न-भिन्न वर्णन करेगा वह (वेदवित्) तत्वदर्शी है। फिर उस पूर्ण ज्ञानी (तत्वदर्शी) सन्त से उपदेश लेकर उस परम पद परमेश्वर को भली प्रकार खोजना चाहिए। जहाँ जाने के उपरान्त जन्म-मत्यु कभी नहीं होती अर्थात् अनादि मोक्ष प्राप्त होता है। इसलिए दृढ़ विश्वास के साथ उसी पूर्ण परमात्मा (सतपुरुष) का ही सुमरण करना चाहिए।

पवित्र गीता अध्याय 4 श्लोक 5 में गीता बोलने वाला प्रभु (ब्रह्म) ने कहा है कि हे अर्जुन! मेरे तथा तेरे बहुत से जन्म हो चुके हैं। गीता अध्याय 2 श्लोक 12 में यही प्रमाण है कहा है कि हे अर्जुन! तू मैं तथा यह सर्व सैनिक पहले भी जन्में थे, आगे भी जन्मेंगें। अध्याय 10 श्लोक 2 में कहा है कि मेरी उत्पत्ति को न ऋषिजन जानते हैं, न देवता क्योंकि इन सबकी उत्पत्ति मेरे से हुई है। {इससे

स्पष्ट है कि ब्रह्म भी नाशवान प्रभु (क्षर पुरुष) है।} इसलिए गीता अ. 15 श्लोक 16-17 में तीन प्रभुओं की भिन्न-भिन्न व्याख्या है - दो प्रभु, क्षर पुरुष (नाशवान भगवान - ब्रह्म) तथा अक्षर पुरुष (अक्षर ब्रह्म) हैं, परन्तु वास्तव में अविनाशी तो इन दोनों से अन्य प्रभु है जो वास्तव में अविनाशी परमात्मा परमेश्वर कहलाता है। जैसे एक मिट्टी का सफेद प्याला जो बिल्कुल अस्थाई है, ऐसे ब्रह्म(क्षर पुरुष) तथा इसके इक्कीस ब्रह्मण्डों के प्राणी नाशवान हैं। दूसरा प्याला इस्पात (स्टील) का है। इस्पात को भी जंग लगता है और विनाश हो जाता है। सफेद मिट्टी के प्याले की तुलना में इस्पात का प्याला अधिक स्थाई परन्तु है नाशवान। इसलिए इतना अविनाशी इस्पात (स्टील) का प्याला है ऐसे अक्षर पुरुष (परब्रह्म) तथा इसके सात शंख ब्रह्मण्डों के प्राणी अविनाशी जैसे लगते हुए भी नाशवान हैं अर्थात् वास्तव में अविनाशी नहीं हैं। तीसरा प्याला सोने (गोल्ड) का है जो वास्तव में अविनाशी धातु से बना है। जिसका अस्तित्व समाप्त नहीं होता। ऐसे पूर्ण ब्रह्म (परम अक्षर पुरुष) तथा उसके असंख ब्रह्मण्डों में रहने वाले हंसात्माऐं (देवा) वास्तव में अविनाशी हैं तथा वही तीनों लोकों में प्रवेश करके सर्व का पालन-पोषण करता है। कविर्देव अर्थात् कबीर प्रभु ने अपने द्वारा रची सष्टि को स्वयं बताया है।

कबीर अक्षर पुरुष एक पेड़ है, ज्योति निरंजन वाकी डार। तीनों देवा शाखा हैं, पात रूप संसार।।
कबीर हम ही अलख अल्लाह हैं, मूल रूप करतार। अनन्त कोटि ब्रह्मण्ड का, मैं ही सिरजनहार।।

अक्षर पुरुष (परब्रह्म) तो उलटे लटके पेड़ का तना है तथा मोटी डार ज्योति निरंजन (क्षर पुरुष-ब्रह्म) है तथा उस डार से आगे तीनों शाखाऐं तीनों गुण (रजगुण-ब्रह्मा जी, सतगुण-विष्णु जी, तमगुण-शिव जी) हैं। परन्तु मूल (जड़) पूर्ण पुरुष (परम अक्षर ब्रह्म, सतपुरुष) है। पेड़ को जड़ (मूल) से अर्थात् पूर्ण ब्रह्म से आहार प्राप्त होता है। इसलिए कुल का पालनहार वही परम अक्षर ब्रह्म है जिसका प्रमाण गीता अ. 8 के श्लोक 1 व 3 में दिया है। अर्जुन ने पूछा - हे प्रभु! वह तत् ब्रह्म कौन है, जिसके विषय में आपने गीता अ. 7 श्लोक 29 में कहा है कि तत्ब्रह्म (उस पूर्ण परमात्मा) को तथा पूरे अध्यात्म ज्ञान (तत्वज्ञान) को जानने के बाद तो साधक जरा-मरण से छूटने का ही प्रयत्न करता है। पवित्र गीता बोलने वाले (ब्रह्म) ने गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में उत्तर दिया कि वह परम अक्षर ब्रह्म (पूर्ण ब्रह्म) है। गीता अ. 8 श्लोक 6, में कहा है कि यह विधान है कि अन्त समय में जो साधक जिस भी प्रभु (ब्रह्म, परब्रह्म, पूर्णब्रह्म) का स्मरण करता हुआ प्राण त्याग कर जाता है तो उसी को प्राप्त होता है।

प्रश्न :- आपने गीता अध्याय 7 श्लोक 18 के अनुवाद में अर्थ का अनर्थ किया है ''अनुत्तमाम्'' का अर्थ अश्रेष्ठ किया है। जब कि समास में अनुत्तम का अर्थ अति उत्तम होता है जिस से उत्तम कोई और न हो उस के विषय में समास में अनुत्तम का अर्थ अति उत्तम होता है। अन्य गीता अनुवाद कर्त्ताओं ने सही अर्थ किया है अनुत्तम का अर्थ अति उत्तम किया है।

उत्तर :- मैं आपकी इस बात को सत्य मानकर आपसे प्रार्थना करता हूँ कि ''गीता ज्ञान दाता अपनी साधना के विषय में गीता अध्याय 7 श्लोक 16 से 18 में बता रहे हैं। गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में अपनी साधना व गति को अनुत्तम कह रहे हैं जिसका भावार्थ आपके समास के अनुसार हुआ कि गीता ज्ञानदाता की गति से उत्तम अन्य कोई गति नहीं अर्थात् मोक्ष लाभ नहीं।

गीता ज्ञान दाता स्वयं गीता अध्याय 18 श्लोक 62 व अध्याय 15 श्लोक 4 में किसी अन्य परमेश्वर की शरण में जाने को कह रहे हैं। उसी की कपा से परम शान्ति व शाश्वत स्थान सदा रहने वाला मोक्ष स्थल अर्थात् सत्यलोक प्राप्त होगा। अपने विषय में भी कहा है कि मैं भी

जन्मता-मरता हैँ, अविनाशी परमात्मा कोई अन्य है। उसी पूर्ण परमात्मा की भक्ति करनी चाहिए तथा कहा है कि उस परमेश्वर के परमपद (सत्यलोक) को प्राप्त करना चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक लौटकर इस संसार में कभी नहीं आते अर्थात् उनका जन्म मत्यु सदा के लिए समाप्त हो जाता है।

❖ *अपने से अन्य परमात्मा के विषय में गीता अध्याय 18 श्लोक 46,61-62,64,66 अध्याय 15 श्लोक 4,16-17, अध्याय 13 श्लोक 12 से 17, 22 से 24, 27-28,30-31,34 अध्याय 5 श्लोक 6-10,13 से 21 तथा 24-25-26 अध्याय 6 श्लोक 7,19,20,25,26-27 अध्याय 4 श्लोक 31-32, अध्याय 8 श्लोक 3,8 से 10, 20 से 22, अध्याय 7 श्लोक 19 तथा 29, अध्याय 14 श्लोक 19 आदि-2 श्लोकों में कहा है। इससे सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान दाता से श्रेष्ठ अर्थात् उत्तम परमात्मा तो अन्य है जैसे गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि उत्तम पुरूषः तु अन्यः जिसका अर्थ है उत्तम परमात्मा तो अन्य ही है। इसलिए उस उत्तम पुरूष अर्थात् सर्वश्रेष्ठ परमात्मा की गति अर्थात् उस से मिलने वाला मोक्ष भी अति उत्तम हुआ। इस से यह भी सिद्ध हुआ कि उस परमेश्वर अर्थात् पूर्ण परमात्मा की गति गीता ज्ञान दाता वाली गति से उत्तम हुई। इसलिए गीता ज्ञान दाता वाली गति सर्व श्रेष्ठ नहीं है। अर्थात् जिस से श्रेष्ठ कोई न हो क्योंकि जब गीता ज्ञान दाता से श्रेष्ठ कोई और परमेश्वर है तो उस की गति भी गीता ज्ञान दाता से श्रेष्ठ है। इससे सिद्ध हुआ कि गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में अनुत्तम का अर्थ अश्रेष्ठ ही उचित है। अन्य गीता अनुवाद कर्त्ताओं ने अर्थ का अनर्थ किया है। जो अनुत्तम का अर्थ अति उत्तम कहा तथा किया है।*

❖ *<u>गीता अध्याय</u> 7 श्लोक 19 का सारांश : इस मंत्र में ब्रह्म (काल) कह रहा है कि मेरी साधना भी भाग्यवान व्यक्ति अनेक जन्मों के बाद कोई-कोई ही करता है, नहीं तो नीचे के श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी तथा अन्य देवताओं, भूतों व पितरों तक की भक्ति से ऊपर बुद्धि नहीं उठती। परन्तु यह बताने वाला संत बहुत दुर्लभ है कि वासुदेव यानि पूर्ण परमात्मा ही पूजा के योग्य है। वह सर्व सष्टि रचनहार है। वही सर्व का धारण-पोषण करने वाला सर्वशक्तिमान है, वही वास्तव में वासुदेव है। वासुदेव का अर्थ है सर्व का मालिक। जैसे श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी एक ब्रह्मण्ड में एक-एक विभाग के मंत्री(प्रभु) हैं। रजोगुण विभाग के श्री ब्रह्मा जी, सतोगुण विभाग के श्री विष्णु जी तथा तमोगुण विभाग के श्री शिव जी, सर्व के मालिक अर्थात् वासुदेव नहीं हैं। ब्रह्म इक्कीस ब्रह्मण्ड में मुख्य मंत्री (स्वामी) जानो जो काल के आधीन हैं, सर्व का मालिक अर्थात् वासुदेव नहीं है। ऐसे - ऐसे सात शंख ब्रह्मण्ड परब्रह्म (अक्षर पुरुष) के हैं, यह केवल सात शंख ब्रह्मण्ड का मालिक है। सर्व का मालिक अर्थात् वासुदेव नहीं है तथा असंख ब्रह्मण्ड पूर्णब्रह्म (परम अक्षर ब्रह्म/सतपुरुष) के हैं। वह सर्व प्रभुओं का प्रभु यानि परमेश्वर है। वास्तव में सर्व का मालिक अर्थात् वासुदेव पूर्णब्रह्म है। जैसे उलटे लटके वक्ष की जड़ (पूर्णब्रह्म) है जिससे सर्व तना (अक्षर पुरुष) डार (काल-ब्रह्म) शाखा (तीनों रजगुण-ब्रह्मा, सतगुण-विष्णु, तमगुण-शिवजी) को भोजन मिलता है। इसलिए सर्व का पालन कर्त्ता भी पूर्ण ब्रह्म ही हुआ। यह व्याख्या करने वाला संत तो सुदुर्लभ है। उसके मिलने से ही पूर्ण मोक्ष होगा, अन्यथा काल जाल में ही प्राणी फंसे रहेंगे।*

गीता अध्याय 7 श्लोक 20-23 का सारांश :-

।। अन्य देवताओं (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी) की पूजा बुद्धिहीन ही करते हैं।।

विशेष :- गीता के अध्याय 7 के श्लोक नं. 20-23 का संबंध इसी अध्याय के श्लोक नं. 12-15 से है। अध्याय 7 के श्लोक 20 में कहा है कि जिसका सम्बन्ध अध्याय 7 के श्लोक 15 से लगातार है - श्लोक 15 में कहा है कि त्रिगुण माया (जो रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी की पूजा तक सीमित हैं तथा इन्हीं से प्राप्त क्षणिक सुख) के द्वारा जिनका ज्ञान हरा जा चुका है ऐसे असुर स्वभाव को धारण किए हुए नीच व्यक्ति दुष्कर्म करने वाले मूर्ख मुझे नहीं भजते। अध्याय 7 के श्लोक 20 में उन-उन भोगों की कामना के कारण जिनका ज्ञान हरा जा चुका है। वे अपने स्वभाववश प्रेरित होकर अज्ञान आश्रित अन्य देवताओं को पूजते हैं। अध्याय 7 के श्लोक 21 में कहा है कि जो-जो भक्त जिस-जिस देवता के स्वरूप को श्रद्धा से पूजना चाहता है उस-उस भक्त की श्रद्धा को मैं उसी देवता के प्रति स्थिर करता हूँ।

अध्याय 7 के श्लोक 22 में कहा है कि वह जिस श्रद्धा से युक्त हो कर जिस देवता का पूजन करता है। उस देवता से मेरे द्वारा ही विधान किए हुए कुछ इच्छित भोगों को प्राप्त करते हैं। जैसे मुख्य मन्त्री कहे कि नीचे के अधिकारी मेरे ही नौकर हैं। मैंनें उनको कुछ अधिकार दे रखे हैं जो उनके (अधिकारियों के) ही आश्रित हैं वह लाभ भी मेरे द्वारा ही दिया जाता है, परंतु पूर्ण लाभ नहीं है। अध्याय 7 के श्लोक 23 में वर्णन है कि परंतु उन मंद बुद्धि वालों का वह फल नाशवान होता है। देवताओं को पूजने वाले देवताओं को प्राप्त होते हैं। मेरे भक्त मुझको प्राप्त होते हैं अर्थात् काल के जाल से कोई बाहर नहीं है।

विशेष : अध्याय 7 के श्लोक 20 से 23 तक का सम्बन्ध इसी अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 से लगातार है। इन 20 से 23 में कहा है कि वे जो भी साधना किसी भी पित्र, भूत, देवी-देवता आदि की पूजा स्वभाव वश करते हैं। मैं (ब्रह्म-काल) ही उन मन्द बुद्धि लोगों (भक्तों) को उसी देवता के प्रति आसक्त करता हूँ। वे मूर्ख साधक देवताओं से जो लाभ पाते हैं, मैंने (काल ने) ही देवताओं को कुछ शक्ति दे रखी है। उसी के आधार पर उनके (देवताओं के) पूजारी देवताओं को प्राप्त हो जाएंगे। परंतु उन बुद्धिहीन साधकों की वह पूजा चौरासी लाख योनियों में शीघ्र ले जाने वाली है तथा जो मुझे (काल को) भजते हैं, वे मुझे प्राप्त होते हैं यानि मेरे ब्रह्म लोकों में चले जाते हैं जिसे महास्वर्ग कहा जाता है। गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में कहा है कि ब्रह्मलोक तक गए सबका पुनर्जन्म होता है।

भले ही महास्वर्ग में गए साधक का स्वर्ग समय एक कल्प होता है, परन्तु स्वर्ग तथा महास्वर्ग में शुभ कर्मों का मोक्ष का सुख भोगकर पुनः जन्म-मरण, नरक तथा अन्य प्राणियों के शरीर में भी कष्ट बना रहेगा, पूर्ण मोक्ष नहीं अर्थात् काल जाल से मुक्ति नहीं। श्री विष्णु पुराण में पष्ठ 51, प्रथम अंश-अध्याय 12 श्लोक 93 में लिखा है कि ध्रुव का मोक्ष समय एक कल्प है।

❖ *एक कल्प का समय ब्रह्मा जी का एक दिन यानि एक हजार आठ चतुर्युग है। एक चतुर्युग में तिरतालिस लाख बीस हजार (43,20,000) मानव वर्ष होते हैं। गणित की रीति से चार अरब पैंतीस करोड़ पैंतीस लाख साठ हजार (4,35,35,60,000) वर्ष है। ध्रुव का इसके पश्चात् जन्म-मरण का क्रम शुरू हो जाएगा।*

।। ज्योति निरंजन (काल) कभी स्थूल शरीर आकार में सर्व के समक्ष नहीं आता।।

अध्याय 7 के श्लोक 24 में ब्रह्म कह रहा है कि मूर्ख मेरे अति गन्दे अटल भाव (कालरूप) को नहीं जानते। मुझ (अव्यक्त) अदृश्यमान अर्थात् योग माया से छिपे हुए को (व्यक्त) श्री कृष्ण रूप में प्रकट हुआ मानते हैं अर्थात् मैं श्री कृष्ण नहीं हूँ। अनुत्तम अविनाशी भाव को नहीं जानते का तात्पर्य है कि मेरा काल भाव जीवों को खाना, गधे, कुत्ते, सूअर आदि बनाना, नाना प्रकार से कष्ट पर कष्ट देना तथा पुण्यों के आधार पर स्वर्ग देना तथा काल ने प्रतिज्ञा की है कि मैं कभी भी अपने वास्तविक काल रूप में सर्व के समक्ष प्रकट नहीं होऊँगा। यह मेरा कभी समाप्त न होने वाला (अविनाशी) भाव है। मैं आकार में श्री कृष्ण जी, श्री रामचन्द्र जी के रूप में कभी नहीं आता। यह मेरा घटिया अटल अविनाशी नियम है। यह तो माया के द्वारा बने शरीर के भगवान आते हैं जो मेरे द्वारा ही भेजे जाते हैं और मैं (काल) उनमें प्रवेश करके अपना सर्व कार्य करता रहता हूँ।

गरीब, अनन्त कोटि अवतार हैं, माया के गोविंद। कर्त्ता हो–हो कर अवतरे, बहुर पड़े जम फन्द।।

❖ **भावार्थ :- काल द्वारा माया यानि दुर्गा से उत्पन्न श्री विष्णु, श्री ब्रह्मा तथा शिव जी रूपी गोविंद यानि प्रभु असँख्यों अवतार रूप में जन्म ले चुके हैं। पथ्वी ऊपर भोले जीव उनको सर्व के कर्ता मानते हैं। परंतु वे अपना अवतार समय पूरा करके कर्मों के अनुसार जन्म-मरण चक्र में बँधकर जन्मते-मरते हैं।**

अध्याय 7 के श्लोक 25 में गीता ज्ञान दाता (काल ब्रह्म) ने कहा है कि मैं अपनी (योगमाया) सिद्धि शक्ति से छुपा रहता हूँ अर्थात् अपने इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में सर्वोपरि निज स्थान पर रहता हूँ। इसलिए दृश्यमान नहीं हूँ। इसलिए कहा है कि मैं कभी भी जन्म नहीं लेता अर्थात् स्थूल शरीर में श्री कृष्ण जी की तरह माता से जन्म नहीं लेता। इस अविनाशी (अटल) नियम को यह मूर्ख संसार नहीं जानता अर्थात् यह मूर्ख प्राणी समुदाय मुझे कृष्ण मान रहा है, मैं कृष्ण नहीं हूँ तथा में अपनी योग माया से छिपा रहता हूँ। इससे स्पष्ट है कि काल ही श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रवेश करके बोल रहा है। नहीं तो कृष्ण जी तो आकार में अर्जुन के समक्ष ही थे। श्री कृष्ण जी का यह कहना उचित नहीं होता कि मैं आकार में नहीं आता, श्री कृष्ण आदि की तरह दुर्गा (प्रकृति) के गर्भ से जन्म नहीं लेता। क्योंकि दुर्गा तो ब्रह्म की पत्नी है। काल अपनी शब्द शक्ति से अपने नाना रूप (महाब्रह्मा, महाविष्णु तथा महाशिव आदि) बना लेता है। फिर निर्धारित समय पर उस शरीर को त्याग देता है। इस प्रकार के जन्म व मृत्यु होती है। इसीलिए पवित्र गीता अध्याय 4 श्लोक 5 तथा गीता अध्याय 2 श्लोक 12 में कहा है कि मेरे तथा तेरे बहुत जन्म हो चुके हैं, तू नहीं जानता, मैं जानता हूँ। ऐसा नहीं है कि मैं तथा तू तथा ये सैनिक पहले नहीं थे या आगे नहीं रहेंगे। गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में कहा है कि मेरी उत्पत्ति (जन्म) को देवता तथा ऋषिजन भी नहीं जानते क्योंकि ये सर्व मेरे से उत्पन्न हुए हैं।

गीता अध्याय 4 श्लोक 9 में कहा है कि मेरे जन्म और कर्म अलौकिक हैं। उपरोक्त प्रमाणों से सिद्ध हुआ कि ब्रह्म की भी उत्पत्ति हुई है। उसको तो पूर्ण परमात्मा ही बताता है क्योंकि पूर्ण ब्रह्म (सतपुरुष) कविर्देव की शब्द शक्ति से अण्डे से काल (ब्रह्म) की उत्पत्ति हुई है, यही प्रमाण पवित्र गीता अध्याय 3 श्लोक 14-15 में भी है कि ब्रह्म की उत्पत्ति अविनाशी परमात्मा से हुई जो काल ब्रह्म का जनक है। उसने काल ब्रह्म की उत्पत्ति बताई है। जैसे पिता की उत्पत्ति बच्चे नहीं जानते, परंतु दादा जी (पिता का पिता) ही बता सकता है। यहाँ यह संकेत है कि ब्रह्म कह रहा है कि मेरी

उत्पत्ति भी है, परन्तु मेरे से उत्पन्न देवता (ब्रह्मा-विष्णु - शिव) भी नहीं जानते।

विशेष :- व्यक्त का भावार्थ है कि प्रत्यक्ष दिखाई देना अर्थात् साक्षात्कार होना। अव्यक्त का भावार्थ होता है कि कोई वस्तु है परन्तु अदश्य है। जैसे आकाश में बादल छा जाते हैं तो सूर्य अव्यक्त (अदश) हो जाता है। परन्तु बादलों के पार विद्यमान है। ऐसे सर्व प्रभु मानव सदश शरीर में विद्यमान हैं। परन्तु हमारी दष्टि से परे हैं। इसलिए अव्यक्त कहे जाते हैं। एक अव्यक्त तो गीता ज्ञान दाता है जो गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 में प्रमाण है यह ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरूष अव्यक्त हुआ। दूसरा अव्यक्त गीता अध्याय 8 श्लोक 18 में कहा है कि सर्व संसार दिन में अव्यक्त से उत्पन्न होता है यह परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरूष अव्यक्त हुआ। तीसरा अव्यक्त गीता अध्याय 8 श्लोक 20-22 में कहा है कि उस (श्लोक 18 में वर्णित) अव्यक्त से दूसरा अव्यक्त कभी नष्ट नहीं होता। यह परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पूर्ण ब्रह्म हुआ। इस प्रकार तीनों परमात्मा साकार है परन्तु जीव की दष्टि से परे हैं इसलिए अव्यक्त कहलाते हैं।

❖ *गीता अध्याय 7 श्लोक 26 से 29 का सारांश :-*

अध्याय 7 के श्लोक 26 से 28 तक इन श्लोकों में गीता ज्ञान दाता भगवान कह रहा है कि मैं (ब्रह्म) भूत-भविष्य तथा वर्तमान में सर्व प्राणियों (जो मेरे इक्कीस ब्रह्मण्डों में मेरे आधीन हैं)की स्थिति से परीचित हूँ कि किसका जन्म किस योनी में होगा। परंतु मुझे कोई नहीं जान सकता। सब संसार राग, द्वेष, मोह से दुःखी है तथा अज्ञानी हो चुका है। जिनके राग-द्वेष व मोह दूर हो गया वे पाप रहित प्राणी ही मेरा भजन कर सकते हैं अन्यथा नहीं। विचार करें : राग द्वेष व मोह और पाप रहित प्राणी ही प्रभु चिन्तन कर सकते हैं, अन्य नहीं। पाप रहित का भाव है कि जिनका संश्य मिट गया कि देवी-देवताओं और ब्रह्मा, विष्णु, शिव तथा माता की पूजा से तो ब्रह्म (काल) साधना अधिक लाभदायक है। फिर वह साधक निष्कपट (पाप रहित) भाव से भगवन चिंतन करता है। जो साधना पवित्र वेदों व पवित्र गीता में वर्णित है उससे साधक तीन लोक व इक्कीस ब्रह्मण्ड (काल लोक) में विकारों से रहित हो ही नहीं सकता। फिर आम भक्त कैसे पाप या कर्म मुक्त हो सकता है? राग-द्वेष, मोह आदि से भगवान विष्णु भी नहीं बचे, न ब्रह्मा जी न शिव जी। फिर आम व्यक्ति कैसे उम्मीद रख सकता है? यहाँ मुझ दास (रामपाल दास) अर्थात् अनुवाद कर्त्ता के कहने का भाव यह है कि वेदों व गीता में वर्णित भक्ति विधि से साधक पाप मुक्त नहीं होता अपितु ''जैसा कर्म वैसा भोग'' वाला सिद्धान्त ही प्राप्त होता है। जैसे भगवान विष्णु अवतार श्री रामचन्द्र जी ने बाली को धोखे से मारा था। उसका बदला श्री कष्ण रूप में देना पड़ा। पापनाशक परमात्मा पूर्ण ब्रह्म है वह विधि पांचवें वेद में अर्थात् स्वसम (सूक्ष्म) वेद में लिखी है। इसलिए तत्वदर्शी सन्त ही उस पाप नाशक साधना को बताता है जिससे साधक पाप रहित होकर पूर्ण मोक्ष प्राप्त करता है।

❖ *श्लोक 26 :- इस श्लोक में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि मैं भूत-भविष्य की घटनाओं को जानता हूँ, परंतु मैं कभी किसी के सामने प्रत्यक्ष नहीं होता। जिस कारण से मुझ काल को कोई नहीं जानता।(7/26)*

❖ *श्लोक 27 :- तत्वज्ञान के अभाव से सम्पूर्ण प्राणी अज्ञान के कारण संसार में इच्छा और द्वेष करके सुख-दुःख को प्राप्त हो रहे हैं। वे ब्रह्म काल यानि गीता ज्ञान दाता तथा अन्य देवी-देवताओं की भक्ति करके भी कर्मों के फल अनुसार सुख-दुःख, जरा-मरण के चक्र में पड़े हैं।(7/27)*

❖ *श्लोक 28 :- परंतु जो पूर्व संस्कार के प्रभाव से पुण्य कर्म करने वाले पाप करने से बचकर राग-द्वेष जनित द्वन्द्व रूप मोह से मुक्त है, दढ़ निश्चयी मुझको भजते हैं।(7/28)*

।। काल के जाल से कौन छूटते हैं?।।

अध्याय 7 के श्लोक 29 का भावार्थ है कि काल ब्रह्म ने कहा है कि जो मेरे ज्ञान का आश्रय लेकर तत्वदर्शी संत की खोज कर तत्वज्ञान से परिचित हैं जो जरा यानि वृद्धावस्था तथा मरण यानि मृत्यु के कष्ट से मोक्ष (छुटकारा) प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील यानि भक्ति में लगे हैं। वे तत् ब्रह्म को, सम्पूर्ण अध्यात्म को तथा सम्पूर्ण कर्मों को जानते हैं।(7/29)

गीता अध्याय 7 श्लोक 30 :- इस श्लोक का भावार्थ है कि जिनको तत्वज्ञानी संत नहीं मिला, वे मुझे ही अधिभूत यानि सर्व प्राणियों का अधीक्षक यानि मालिक से अधिदैवम् यानि सर्व देवों अर्थात् प्रभुओं का अधीक्षक तथा साधियज्ञम् यानि सर्व यज्ञों अर्थात् सर्व धार्मिक अनुष्ठानों का अधीक्षक (यज्ञों में प्रतिष्ठित) मुझे ही जानते हैं। वे भक्ति में लगे (युक्त चतसा) मृत्यु समय भी मुझे ही सर्वेसवा जानते हैं। वे मेरे को ही प्राप्त होते हैं यानि काल जाल में ही रह जाते हैं।(7/30)

पूर्ण ब्रह्म परमात्मा जो यज्ञों में प्रतिष्ठित (अधियज्ञ) है। अध्याय 3 के श्लोक 14,15 में पूर्ण विवरण है।

शंका-प्रभु प्रेमी पाठकों के मन में शंका उत्पन्न होगी कि जब ब्रह्म (काल) अपनी साधना को भी (अनुत्तमाम्) अति अश्रेष्ठ कह रहे हैं (गीता अध्याय 7 श्लोक 18) तो फिर अपनी साधना करने को क्यों कह रहे हैं तथा तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तमगुण शिव) की भक्ति करने वालों को हेय किसलिए कहा है? (गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15)

शंका समाधान :- शास्त्र अनुकूल भक्ति पवित्र वेदों व पवित्र गीता जी में वर्णित विधि (ओ३म् नाम का जाप उच्चारण करके स्मरण करने व धर्म, ध्यान, प्रणाम, हवन, ज्ञान ये पाँचों यज्ञ करने) से प्रारम्भ होती है। उससे ब्रह्मलोक में बने महास्वर्ग में एक कल्प या महाकल्प तक मोक्ष सुख प्राप्त होता है, परन्तु पाप कर्मों के दण्ड आधार से नरक तथा फिर चौरासी लाख प्रकार के प्राणियों के शरीर में कष्ट भी उठाना ही पड़ेगा। एक मानव शरीर फिर प्राप्त होगा। वे पुण्यात्माऐं जब मानव शरीर में होंगी और उन्हें कोई तत्वदर्शी संत पूर्ण परमात्मा (सतपुरुष) का ज्ञान बताएगा तो वे शीघ्र ही उस साधना पर लग जाती हैं, क्योंकि उनमें पिछले भक्ति संस्कार विद्यमान होते हैं तथा सत्य साधना करके पूर्ण मोक्ष प्राप्त कर लेते हैं। अन्य देवताओं की पूजा से मोक्ष समय बहुत कम तथा नरक समय अधिक होता है तथा चौरासी लाख योनियों का कष्ट भी अधिक समय तक होता है। जैसे एक प्रकार के प्राणी (कुत्ते) के जन्म ही लगातार 20 हो जाऐं, फिर दूसरे प्राणी के भी अधिक होने के कारण अधिक कष्ट उठाते हैं। परन्तु मर्यादावत् ब्रह्म (काल) साधना करने वालों के प्रत्येक योनी के संस्कार वश कम जन्म होते हैं तथा चौरासी लाख प्रकार के प्राणियों का शीघ्र-शीघ्र भोगा जाता है। जैसे कुत्ते की मृत्यु 10 वर्ष में होती है, एक माता के गर्भ से बाहर आते ही मर जाता है। जैसे ऋषि सुखदेव जी का जीव मादा तोते के अण्डे में ही था, अण्डा खराब हो कर छूटकारा हो गया,नहीं तो तोतेकी आयु मनुष्य से भी अधिक होती है। इस प्रकार कष्टमय शरीरों से शीघ्र छुटकारा हो जाता है।

अन्य देवताओं के साधकों को जब कभी मानव शरीर प्राप्त होता है तो वे फिर अपने पिछले संस्कार स्वभाववश उन्हीं तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तमगुण शिव आदि अन्य देवताओं) की तथा भूत-भैरवों व पितरों की ही पूजा करते हैं, कहने से भी नहीं मानते। जो साधक शास्त्र अनुकूल साधना पिछले जन्म में करते थे उनमें दो प्रकार के बताए हैं, एक तो ब्रह्म साधक

जो ओ३म् नाम मंत्र जाप व पाँचों यज्ञ किया करते थे, वे तो महास्वर्ग, नरक व अन्य प्राणियों के शरीर में कष्ट उठाते रहते हैं। उनके मानव जन्म भी लगातार एक से अधिक भी हो सकते हैं। यदि उन सर्व मानव जन्मों में भी पूर्ण (तत्वदर्शी) संत नहीं मिला फिर उपरोक्त सर्व स्थितियों से गुजरना पड़ता है। परन्तु सत्य साधना पर शीघ्र लग जाते हैं। दूसरी प्रकार के शास्त्र विधि अनुसार साधना करने वाले वे साधक हैं जो कभी किसी युग में पूर्ण परमात्मा की साधना पूर्ण संत (तत्वदर्शी संत) से प्राप्त करके किया करते थे। परन्तु मुक्त नहीं हो पाए। वे साधक एक ब्रह्मण्ड में बने सतगुरु कबीर लोक में चले जाते हैं। जहाँ पर उन साधकों की अपनी भक्ति कमाई समाप्त नहीं होती, क्योंकि परमपिता का भण्डारा मुफ्त (निःशुल्क) चलता रहता है। वहाँ अन्य कोई नहीं जा सकता। फिर उन साधकों को पूर्ण परमात्मा पुनर् मानव जन्म उस समय प्रदान करता है जब कोई (तत्वदर्शी) संत पूर्ण साधना बताने वाला आने वाला होता है। उस समय वे साधक उस सत्य साधना बताने वाले पूर्ण संत की वाणी पर (प्रवचनों पर) शीघ्र विश्वास कर लेते हैं तथा भक्ति प्रारम्भ कर देते हैं। उन्हीं में से कुछ आत्माऐं नकली सतलोक साधना का मिलता-जुलता ज्ञान बताने वाले नकली संतों को पूर्ण संत मान कर उसी पर आधारित हो जाती हैं तथा फिर कुऐं के मेंढक बन कर उसी ज्ञान को सुनते रहते हैं। सत्यज्ञान को सुन कर आँखों देखकर भी नहीं मानते दूसरी प्रकार के शास्त्र अनुकूल साधक जो किसी युग में सतनाम जाप वाली साधना किए हुए हैं वे पिछले शास्त्र अनुकूल साधक भी काल जाल में ही रह जाते हैं। यदि वे तत्वज्ञान को ध्यान से सुन व पढ़ लेंगे तो तुरन्त पूर्ण संत (तत्वदर्शी संत) की शरण में आ जाते हैं। जो पूर्ण संत की शरण में नहीं आते वे पिछले सत्यभक्ति साधना की कमाई अनुसार अनेकों मानव शरीर प्राप्त करते रहते हैं तथा पूर्ण संत के अभाव से फिर चौरासी लाख प्राणियों के शरीरों व नरक-स्वर्ग के चक्र में फंस जाते हैं।

विशेष :- अर्जुन को अध्याय 7 श्लोक 29 में शंका हुई कि ''तत् ब्रह्म'' तो गीता ज्ञान से अन्य है। उसकी जानकारी के लिए अगले अध्याय 8 के प्रथम श्लोक में ही प्रश्न किया है। आगे पढ़ें अध्याय में गीता ज्ञान दाता तथा तत् ब्रह्म यानि परम अक्षर ब्रह्म की भिन्न-भिन्न जानकारी :-

❑❑❑

सातवें अध्याय के सर्व श्लोकों का हिन्दी अनुवाद

❖ गीता अध्याय 7 श्लोक 1 का अनुवाद : हे पार्थ! मुझ में आसक्त चित भाव से मेरे मत के परायण होकर योग में लगा हुआ तू जिस प्रकार से सम्पूर्ण रूप से मुझ को संशयरहित जानेगा उसको सुन।(1)

❖ श्लोक 2 का अनुवाद : मैं तेरे लिये इस विज्ञानसहित तत्वज्ञानको सम्पूर्णतया कहूँगा जिसको जानकर संसारमें फिर और कुछ भी जाननेयोग्य शेष नहीं रह जाता। (2)

❖ श्लोक 3 का अनुवाद :हजारों मनुष्यों में कोई एक प्रभु प्राप्ति के लिये यत्न करता है। यत्न करने वाले योगियों में भी कोई एक मुझको तत्व से अर्थात् यथार्थ रूप से जानता है। (3)

❖ श्लोक 4-5 का अनुवाद : पथ्वी जल अग्नि वायु आकाश आदि से स्थूल शरीर बनता है। इसी प्रकार मन बुद्धि और अहंकार आदि से सूक्ष्म शरीर बनता है। इस प्रकार यह आठ प्रकार से विभाजित मेरी प्रकति है। ये तो अपरा अर्थात् जड़ प्रकति है। उपरोक्त दोनों शरीरों में इसी का परम योगदान है और हे महाबाहो! इससे दूसरी को जिससे यह सम्पूर्ण जगत् संभाला जाता है। मेरी जीवरूपा साकार चेतन प्रकति अर्थात् दुर्गा जान क्योंकि दुर्गा ही अन्य रूप बनाकर सागर में छुपी तथा लक्ष्मी-सावित्री व उमा रूप बनाकर तीनों देवों (ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव) से विवाह करके जीवों की उत्पत्ति की।(4-5)

❖ श्लोक 6 का अनुवाद : इस प्रकार भूल भूलईयां करके सम्पूर्ण प्राणी इन दोनों प्रकतियों से ही उत्पन्न होते हैं और मैं सम्पूर्ण जगत् का उत्पन्न तथा नाश हूँ। (6)

❖ श्लोक 7 का अनुवाद : हे धनंजय! उपरोक्त अर्थात् सिद्धान्त से दूसरा कोई भी परम कारण नहीं है। यह सम्पूर्ण जगत् सूत्र में मणियों के सदश मुझ में गुँथा हुआ है। (7)

❖ श्लोक 8 का अनुवाद : हे अर्जुन! मैं जल में रस हूँ चन्द्रमा और सूर्य में प्रकाश हूँ सम्पूर्ण वेदों में ओंकार हूँ आकाश में शब्द और मनुष्यों में पुरुषत्व हूँ। (8)

❖ श्लोक 9 का अनुवाद : पथ्वी में पवित्र गन्ध और अग्नि में तेज हूँ तथा सम्पूर्ण प्राणियों में उनका जीवन हूँ और तपस्वियों में तप हूँ। (9)

❖ श्लोक 10 का अनुवाद : हे अर्जुन! तू सम्पूर्ण प्राणियों का आदि कारण मुझको ही जान मैं बुद्धिमानों की बुद्धि और तेजस्वियों का तेज हूँ। (10)

❖ श्लोक 11 का अनुवाद : : हे भरतश्रेष्ठ! मैं बलवानों का आसक्ति और कामनाओं से रहित सामर्थ्य हूँ और मेरे अन्तर्गत सर्व प्राणियों में धर्म के अनुकूल अर्थात् शास्त्र के अनुकूल कर्म हूँ। (11)

''श्री ब्रह्मा-विष्णु तथा शिव जी व अन्य देवताओं की साधना व्यर्थ है''

❖ श्लोक 12 का अनुवाद : और भी जो सत्वगुण विष्णु जी से स्थिति भाव हैं और जो रजोगुण ब्रह्मा जी से उत्पत्ति तथा तमोगुण शिव से संहार हैं। उन सबको तू मेरे द्वारा सुनियोजित नियमानुसार ही होने वाले हैं ऐसा जान (तु) परंतु वास्तव में उनमें मैं और वे मुझमें नहीं हैं। (12)

❖ श्लोक 13 का अनुवाद : इन गुणोंके कार्यरूप सात्विक श्री विष्णु जी के प्रभाव से, राजस श्री ब्रह्मा जी के प्रभाव से और तामस श्री शिवजी के प्रभाव से तीनों प्रकार के भावों से यह सारा संसार -

प्राणि समुदाय मुझ काल के ही जाल में मोहित हो रहा है अर्थात् फंसा है इसलिए पूर्ण अविनाशी को नहीं जानता। (13)

❖ श्लोक 14 का अनुवाद : क्योंकि यह अलौकिक अर्थात् अति अद्भभूत त्रिगुणमयी मेरी माया बड़ी दुस्तर है परंतु जो पुरुष केवल मुझको ही निरंन्तर भजते हैं। वे इस माया का उल्लंघन कर जाते हैं अर्थात् तीनों गुणों रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी से ऊपर उठ जाते हैं।(14)

❖ श्लोक 15 का अनुवाद : माया के द्वारा अर्थात् रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तमगुण शिव जी रूपी त्रिगुणमयी माया की साधना से होने वाला क्षणिक लाभ पर ही आश्रित हैं जिनका ज्ञान हरा जा चुका है जो मेरी अर्थात् ब्रह्म साधना भी नहीं करते, इन्हीं तीनों देवताओं तक सीमित रहते हैं। ऐसे आसुर स्वभाव को धारण किये हुए मनुष्यों में नीच दूषित कर्म करने वाले मूर्ख मुझको भी नहीं भजते अर्थात् वे तीनों गुणों (रजगुण-ब्रह्मा, सतगुण-विष्णु, तमगुण-शिव) की साधना ही करते रहते हैं।(15)

''गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म की भक्ति अनुत्तम (घटिया) है''

❖ श्लोक 16 का अनुवाद : हे भरत वंशियोंमें श्रेष्ठ अर्जुन! उत्तम कर्म करनेवाले वेद मन्त्रों द्वारा धन लाभ के लिए अनुष्ठान करने वाला अर्थार्थी वेद मन्त्रों द्वारा संकट निवार्ण के लिए अनुष्ठान करने वाले आर्त परमात्मा के विषय में जानकारी प्राप्त करने की इच्छा से ज्ञान ग्रहण करके वेदों के आधार से ज्ञानवान बनकर वक्ता बन जाता है वह जिज्ञासु और जिसे यह ज्ञान हो गया कि मनुष्य जन्म केवल परमात्मा प्राप्ति के लिए ही है। परमात्मा प्राप्ति भी केवल एक सर्वशक्तिमान परमात्मा की साधना अनन्य मन से करने से होती है वह ज्ञानी ऐसे चार प्रकार के भक्तजन मुझको भजते हैं।(16)

❖ श्लोक 17 का अनुवाद : उनमें नित्य स्थित एक परमात्मा की भक्तिवाला विद्वान अति उत्तम है क्योंकि ज्ञानी को मैं अत्यन्त प्रिय हूँ और वह ज्ञानी मुझे अत्यन्त प्रिय है। (17)

❖ श्लोक 18 का अनुवाद : क्योंकि मेरे विचार में ये सभी ही ज्ञानी आत्मा उदार हैं परंतु वह मुझमें ही लीन आत्मा मेरी अति घटिया मुक्ति में ही आश्रित हैं। (18)

''वासुदेव यानि पूर्ण परमात्मा का ज्ञान बताने वाला महात्मा अति दुर्लभ है''

❖ श्लोक 19 का अनुवाद : बहुत जन्मों के अन्त के जन्म में तत्वज्ञान को प्राप्त मुझको भजता है वासुदेव अर्थात् सर्वव्यापक पूर्ण ब्रह्म ही सब कुछ है इस प्रकार जो यह जानता है वह महात्मा अत्यन्त दुर्लभ है। (19)

''अन्य देवी-देवताओं की पूजा व्यर्थ है''

❖ श्लोक 20 का अनुवाद : उन-उन भोगों की कामनाद्वारा जिनका ज्ञान हरा जा चुका है वे लोग अपने स्वभाव से प्रेरित होकर उस अज्ञान रूप अंधकार वाले नियम के आश्रय से अन्य देवताओं को भजते हैं अर्थात् पूजते हैं। (20)

❖ श्लोक 21 का अनुवाद : जो-जो भक्त जिस-जिस देवता के स्वरूप को श्रद्धा से पूजना चाहता है, उस उस भक्त की श्रद्धा को मैं उसी देवता के प्रति स्थिर करता हूँ। (21)

❖ श्लोक 22 का अनुवाद : वह भक्त उस श्रद्धा से युक्त होकर उस देवता का पूजन करता है और क्योंकि उस देवता से मेरे द्वारा ही विधान किये हुए उन इच्छित भोगों को प्राप्त करता है।(22)

❖ श्लोक 23 का अनुवाद : परंतु उन अल्प बुद्धिवालों का वह फल नाशवान् होता है देवताओं को पूजनेवाले देवताओं को प्राप्त होते हैं और मतावलम्बी अर्थात् मेरे द्वारा बताए भक्ति मार्ग से भी मुझको प्राप्त होते हैं। (23)

''काल की कभी दर्शन न देने की प्रतिज्ञा''

❖ श्लोक 24 का अनुवाद : बुद्धिहीन लोग मेरे अश्रेष्ठ अटल परम भाव को न जानते हुए छिपे हुए अर्थात् परोक्ष मुझ काल को मनुष्य की तरह आकार में कष्ण अवतार प्राप्त हुआ मानते हैं अर्थात् मैं कष्ण नहीं हूँ। (24)

❖ श्लोक 25 का अनुवाद : मैं योगमाया से छिपा हुआ सबके प्रत्यक्ष नहीं होता अर्थात् अदश्य रहता हूँ इसलिये मुझ जन्म न लेने वाले अविनाशी अटल भाव को यह अज्ञानी जन समुदाय संसार नहीं जानता अर्थात् मुझको अवतार रूप में आया समझता है। क्योंकि ब्रह्म अपनी शब्द शक्ति से अपने नाना रूप बना लेता है, यह दुर्गा का पति है इसलिए इस श्लोक में कह रहा है कि मैं श्री कष्ण आदि की तरह दुर्गा से जन्म नहीं लेता। (25)

''काल ब्रह्म अपने अंतर्गत प्राणियों की स्थिति से परिचित है''

❖ श्लोक 26 का अनुवाद : हे अर्जुन! पूर्व में व्यतीत हुए और वर्तमान में स्थित तथा आगे होने वाले सब प्राणियों को मैं जानता हूँ, परंतु मुझको कोई नहीं जानता। (क्योंकि काल कभी किसी को किसी भी साधना से दर्शन नहीं देता। इसलिए उसका ब्रह्मा, विष्णु, शिव तथा सर्व प्राणी जो इसके इक्कीस ब्रह्माण्डों में हैं, किसी को जानकारी नही है।)(26)

❖ श्लोक 27 का अनुवाद : हे भरतवंशी अर्जुन! संसार में इच्छा और द्वेष से उत्पन्न सुख-दुःखादि द्वन्द्वरूप मोह से सम्पूर्ण प्राणी अत्यन्त अज्ञानता को प्राप्त हो रहे हैं। (27)

❖ श्लोक 28 का अनुवाद : परंतु तत्वज्ञान के अभाव से पूर्व जन्म के शुभ संस्कार वाले निष्काम भाव से श्रेष्ठ कर्मों का आचरण करने वाले जो निष्पाप हैं, निष्कपट हैं। वे राग-द्वेषजनित द्वन्द्व रूप मोह से मुक्त दढ़ निश्चयी भक्त मुझको सब प्रकार से भजते हैं। (28)

''तत् ब्रह्म को कौन भजता है''

❖ श्लोक 29 का अनुवाद : जो साधक मेरे द्वारा बताए ज्ञान का आश्रय लेकर तत्वदर्शी संत से ज्ञान समझकर वद्धावस्था तथा मत्यु से छुटकारा यानि मोक्ष के लिए प्रयत्न करते हैं। वे साधक तत् ब्रह्म को, सम्पूर्ण अध्यात्म को और सम्पूर्ण कर्मों को जानते हैं।(29)

''काल ब्रह्म की भक्ति कौन करते हैं''

❖ श्लोक 30 का अनुवाद : जिन्होंने तत्वदर्शी संत से तत्वज्ञान नहीं समझा। जिस कारण से जो साधक अधिभूत अधिदेव सहित तथा अधियज्ञ सहित मुझे जानते हैं और वे साधना में लगे साधक मत्यु समय में भी मुझे ही जानते हैं यानि उनको काल ब्रह्म के अतिरिक्त अन्य पूर्ण परमात्मा का ज्ञान नहीं है। जिस कारण से अंत समय में भी उन अज्ञानियों की आस्था काल ब्रह्म में ही रह

जाती है। जिस कारण से वे काल जाल में ही रह जाते हैं।(30)

विशेष :- गीता के इस अध्याय 7 के श्लोक 29 में ''तत् ब्रह्म'' यानि गीता ज्ञान देने वाले से अन्य ''परम अक्षर ब्रह्म'' की सांकेतिक जानकारी दी है। अर्जुन ने अपनी शंका निवारण करने के लिए अगले अध्याय 8 के श्लोक 1 में प्रश्न किया है कि ''तत् ब्रह्म'' क्या है? इसका उत्तर काल ब्रह्म यानि गीता बोलने वाले ने गीता अध्याय 8 के श्लोक 3, 8, 9, 10, 20, 21, 22 में दिया है जो आप जी आगे पढ़ेंगे।

(इति अध्याय सातवाँ)

❑❑❑